Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 3 | Issue 3 | (July - September 2026)

डॉ. रांगेय राघव के 'देवकी का बेटा' उपन्यास में कृष्ण-चरित की आधुनिक जीवन-दृष्टि

डॉ. सुरेन्द्र कुमार
एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिन्दी, राजकीय महाविद्यालय, भिवानी, हरियाणा

सारांश

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकार डॉ. रांगेय राघव ने जीवनीपरक उपन्यास-विधा को एक नवीन वैचारिक और कलात्मक आधार प्रदान किया। उनका उपन्यास 'देवकी का बेटा' केवल श्रीकृष्ण के जीवन की पुनर्कथा नहीं है, बल्कि भारतीय इतिहास, संस्कृति, लोकतांत्रिक चेतना और मानवतावादी दृष्टि का आधुनिक पुनर्पाठ है। प्रस्तुत शोध-पत्र में 'देवकी का बेटा' का जीवनीपरक उपन्यास की कसौटी पर मूल्यांकन किया गया है। इसमें उपन्यास के शीर्षक, कथानक, इतिहास-बोध, पौराणिक पुनर्व्याख्या, सांस्कृतिक परिवेश, इतिहास और कल्पना के संतुलन, चरित्र-चित्रण तथा लेखक की आधुनिक जीवन-दृष्टि का विश्लेषण किया गया है। रांगेय राघव ने कृष्ण के अलौकिक स्वरूप की अपेक्षा उनके मानवीय, संघर्षशील और जननायक रूप को प्रतिष्ठित किया है। इस प्रकार 'देवकी का बेटा' भारतीय सांस्कृतिक परम्परा और आधुनिक विवेकशील दृष्टि के समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण सिद्ध होता है।

बीज शब्द- रांगेय राघव, देवकी का बेटा, जीवनीपरक उपन्यास, कृष्ण, इतिहास, मानवतावाद, आधुनिक चेतना, पौराणिक पुनर्पाठ।

भूमिका-

डॉ. रांगेय राघव हिन्दी साहित्य के उन विरल रचनाकारों में हैं जिन्होंने साहित्य की प्रत्येक प्रमुख विधा में उल्लेखनीय योगदान दिया। कथा-साहित्य में उनका सबसे महत्त्वपूर्ण अवदान जीवनीपरक उपन्यासों का सृजन है। उन्होंने इतिहास, पुराण और साहित्य के महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्वों को आधुनिक संवेदना के आलोक में पुनः प्रतिष्ठित किया। उनके जीवनीपरक उपन्यासों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे इतिहास को श्रद्धा का विषय बनाकर नहीं, बल्कि आलोचनात्मक विवेक के साथ ग्रहण करते हैं। इसलिए उनके यहाँ अतीत का चित्रण वर्तमान की समस्याओं से निरपेक्ष नहीं है।

इसी क्रम में 'देवकी का बेटा' उनका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण जीवनीपरक उपन्यास है। यह कृति श्रीकृष्ण के सम्पूर्ण जीवन का आख्यान प्रस्तुत नहीं करती, बल्कि उनके जन्म से लेकर कंस-वध तक की घटनाओं के माध्यम से एक ऐसे जननायक की रचना करती है, जिसने निरंकुश सत्ता के विरुद्ध जनशक्ति का संगठन किया। उपन्यास का उद्देश्य कृष्ण के चमत्कारों का विस्तार करना नहीं, बल्कि उनके ऐतिहासिक, सामाजिक और मानवीय व्यक्तित्व को पुनः प्रतिष्ठित करना है। स्वयं रांगेय राघव इसकी भूमिका में स्वीकार करते हैं- "कृष्ण का चरित्र बहुत विशाल है, इसलिए मैंने केवल कंस वध तक का समय लिया है। यदि इस प्रकार पूरा चरित्र लिखा जाए तो सम्भवतः सात-आठ ऐसे ग्रंथ और हो जाएंगे।"[1] यह कथन स्पष्ट करता है कि लेखक का उद्देश्य सम्पूर्ण कृष्ण-चरित लिखना नहीं, बल्कि उनके व्यक्तित्व के उस निर्णायक कालखंड का विश्लेषण करना था जिसने भारतीय इतिहास और सांस्कृतिक चेतना को स्थायी रूप से प्रभावित किया।

'देवकी का बेटा': शीर्षक की सार्थकता और कथानक की सुगठित संरचना- रांगेय राघव के अन्य सभी जीवनीपरक उपन्यासों की भाँति 'देवकी का बेटा' का शीर्षक भी अत्यन्त विचारोत्तेजक है। सामान्यतः भारतीय जनमानस में कृष्ण

का सम्बन्ध यशोदा और नन्द से अधिक जोड़ा जाता है, किन्तु लेखक ने शीर्षक के माध्यम से कृष्ण के जन्म, त्याग और ऐतिहासिक सत्य को केन्द्र में स्थापित किया है। यह शीर्षक केवल जैविक सम्बन्ध का संकेत नहीं देता, बल्कि उस मातृत्व की स्मृति भी जगाता है जिसने निरंकुश सत्ता के विरुद्ध संघर्ष की सबसे बड़ी कीमत चुकाई। लेखक भूमिका में स्पष्ट करता है- "आशा है पाठकों को इस जीवनी के पढ़ने से एक नया दृष्टिकोण अवश्य मिलेगा, जिसमें अतीत का मूल्यांकन करने को एक नई अनुरक्ति पैदा होगी, जिसमें श्रद्धा के स्थान पर सामाजिक और मानवीय रूपों का भी विश्लेषण हो सकेगा।"[2] इसमें लेखक श्रद्धा का निषेध नहीं करता, बल्कि उसे विवेक के साथ जोड़ना चाहता है। इसीलिए कृष्ण को केवल ईश्वर नहीं, बल्कि संघर्षशील मनुष्य और जननायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

उपन्यास का कथानक देवकी-वसुदेव के कारावास, कंस की निरंकुशता, कृष्ण के गोकुल-जीवन तथा अन्ततः कंस-वध तक सीमित है। यह सीमित कालखंड वस्तुतः भारतीय इतिहास की उस राजनीतिक परिस्थिति का प्रतीक है जिसमें गणतांत्रिक व्यवस्थाएँ साम्राज्यवादी शक्तियों के दबाव में विघटित हो रही थीं। कंस केवल एक व्यक्ति नहीं, बल्कि निरंकुश सत्ता का प्रतिनिधि है; वहीं कृष्ण जनतांत्रिक चेतना और लोकशक्ति के प्रतीक हैं। आकाशवाणी के प्रसंग को भी लेखक दैवी चमत्कार के रूप में नहीं, बल्कि राजनीतिक चेतावनी के रूप में ग्रहण करता है। कंस के भय का कारण कोई अलौकिक भविष्यवाणी नहीं, बल्कि जन-प्रतिरोध की सम्भावना है। इस प्रकार कथानक का पूरा विकास सत्ता और समाज के संघर्ष की दिशा में होता है।

कंस द्वारा देवकी की संतानों की हत्या, उग्रसेन का कारावास, जनता का शोषण तथा भय का वातावरण केवल पौराणिक घटनाएँ नहीं रह जातीं, बल्कि वे किसी भी निरंकुश शासन की सार्वकालिक प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करने लगती हैं। दूसरी ओर कृष्ण का विकास केवल व्यक्तिगत प्रतिशोध की कथा नहीं है। उनका प्रत्येक कार्य लोकहित से जुड़ा है। यही कारण है कि कंस-वध के पश्चात् वे स्वयं सत्ता ग्रहण नहीं करते, बल्कि उग्रसेन को पुनः राज्य सौंप देते हैं। इस प्रसंग में उनका परिचय अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है- "मैं... नन्द गोप और यशोदा गोपी का पालित पुत्र, आर्य वसुदेव और आर्या देवकी का औरस पुत्र कृष्ण हूँ।"[3] रांगेय राघव यहाँ भारतीय पारिवारिक संस्कृति, त्याग और पालन-पोषण के मानवीय मूल्यों को अत्यन्त संवेदनशील ढंग से प्रतिष्ठित करते हैं।

कृष्ण का मानवीकरण और आधुनिक जीवन-दृष्टि- रांगेय राघव की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि उन्होंने कृष्ण को चमत्कारों से मुक्त करके भी उनकी महानता को अक्षुण्ण रखा है। वे कृष्ण के देवत्व का निषेध नहीं करते, बल्कि उसके मानवीय आधार की खोज करते हैं। भूमिका में उनका स्पष्ट कथन है कि "मैंने कृष्ण चरित्र को चमत्कारों से अलग करके देखा। धर्ममूढ़ लोग जो शायद इसे नहीं सह सकेंगे, उनसे मैं क्षमा माँगता हूँ; परन्तु वैसे जो महानता कृष्ण के मनुष्य रूप में प्रकट होती है, वह वैसे नहीं मिलती, चमत्कारों में सत्य डूब जाता है।"[4] यह रांगेय राघव की समूची रचनात्मक दृष्टि का घोषणापत्र है। वे मानते हैं कि इतिहास का सबसे बड़ा सम्मान उसे अलौकिक बनाना नहीं, बल्कि उसकी मानवीय उपलब्धियों को समझना है। इसी कारण उपन्यास में गोवर्धन-धारण जैसे मिथकीय प्रसंग का भी वैज्ञानिक और सामाजिक पुनर्पाठ किया गया है। कृष्ण जनता को प्राकृतिक आपदा से सामूहिक संघर्ष की प्रेरणा देते हैं। वे अंधविश्वास के स्थान पर कर्म और संगठन की शक्ति में विश्वास करते हैं। उनका उद्घोष- "जय! गोपजन की जय!"- केवल युद्धघोष नहीं, बल्कि जनशक्ति में विश्वास की उद्घोषणा है।

इसी प्रकार इन्द्र-पूजा का विरोध भी धार्मिक विद्रोह नहीं, बल्कि अंधविश्वास के विरुद्ध विवेक का समर्थन है। कृष्ण कहते हैं कि "यदि कर्म से फल मिलता है तो इन्द्र की क्या आवश्यकता है?"[5] यह प्रश्न केवल पौराणिक व्यवस्था से नहीं, बल्कि प्रत्येक उस सामाजिक संरचना से है जो मनुष्य के श्रम और विवेक की उपेक्षा करती है। इस प्रकार रांगेय

राघव ने कृष्ण को आधुनिक वैज्ञानिक चेतना के अग्रदूत के रूप में प्रस्तुत किया है।

सांस्कृतिक परिवेश और युगीन समाज का पुनर्सृजन- 'देवकी का बेटा' की एक प्रमुख उपलब्धि इसका सजीव सांस्कृतिक परिवेश है। रांगेय राघव ने कृष्णकालीन समाज को केवल घटनाओं की पृष्ठभूमि के रूप में नहीं रखा, बल्कि उसे उपन्यास का सक्रिय अंग बना दिया है। सामाजिक जीवन, वेशभूषा, भोजन, पारिवारिक सम्बन्ध, धार्मिक मान्यताएँ, वर्ण-व्यवस्था, आर्थिक विषमता, लोकाचार आदि का चित्रण इस प्रकार किया गया है कि पाठक तत्कालीन युग में स्वयं को उपस्थित अनुभव करता है। लेखक ने उच्च और निम्न वर्ग के जीवन-स्तर का भी यथार्थ चित्रण किया है। राजसी वैभव और सामान्य जनता के जीवन में स्पष्ट अन्तर दिखाई देता है। कंस का धोबी जब कृष्ण से कहता है- "गाँवों और वनों में रहने वाले वन्यक! तुम यह महाराज के राजस वस्त्र पहनोगे?"[6] तब यह संवाद केवल उपहास नहीं, बल्कि तत्कालीन वर्ग-भेद का सूचक बन जाता है।

उपन्यास में धार्मिक जीवन का चित्रण भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। एक ओर मातृकाओं, पूतना और इन्द्र-पूजा जैसी मान्यताएँ हैं, दूसरी ओर कृष्ण इन रूढ़ियों को विवेक की कसौटी पर परखते हैं। इसी कारण यह उपन्यास सांस्कृतिक परम्परा का समर्थन करते हुए भी अंधविश्वास का समर्थन नहीं करता। लेखक का उद्देश्य संस्कृति का पुनर्जीवन है, रूढ़ियों का पोषण नहीं।

आर्थिक जीवन के चित्रण में भी यथार्थ की प्रधानता है। कृषक, गोप, व्यापारी और श्रमिक वर्ग का जीवन शोषण से पीड़ित है। समाज में वर्णानुसार कर्म-विभाजन विद्यमान है, किन्तु कृष्ण इसे अहंकार का आधार नहीं बनने देते। वे कहते हैं कि "ब्राह्मण लोग वेद के अध्ययन-अध्यापन द्वारा, क्षत्रिय पृथ्वी पालन करके, वैश्य वार्तावृत्ति और शूद्र इन तीनों की सेवा में लगकर पृथ्वी पर निर्वाह करते हैं।"[7] यह तत्कालीन सामाजिक संरचना का परिचायक होने के साथ-साथ कर्मप्रधान दृष्टिकोण का भी उद्घोष है।

इतिहास का पुनर्पाठ और पौराणिक मिथकों का मानवीय रूपान्तरण- रांगेय राघव का सबसे मौलिक योगदान कृष्ण-इतिहास के पुनर्पाठ में निहित है। उन्होंने इतिहास और पुराण के बीच विद्यमान चमत्कारवादी परम्परा को चुनौती देते हुए उसके भीतर निहित ऐतिहासिक एवं मानवीय सत्य को उद्घाटित किया है। उनके लिए इतिहास केवल घटनाओं का अनुक्रम नहीं, बल्कि समाज की विकास-यात्रा है। गोवर्धन-धारण का प्रसंग इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। पारम्परिक कथा में जहाँ कृष्ण अपनी कनिष्ठा अंगुली पर पर्वत धारण करते हैं, वहीं रांगेय राघव इस घटना का सामाजिक और वैज्ञानिक अर्थ प्रस्तुत करते हैं। कृष्ण जनता को प्राकृतिक संकट से जूझने के लिए प्रेरित करते हैं। वे स्वयं जलधारा में उतरकर नेतृत्व करते हैं और "जय! गोपजन की जय!" का उद्घोष करते हैं। इसी प्रकार बलराम के जन्म से सम्बन्धित पौराणिक कथा को भी लेखक ऐतिहासिक तर्क के आधार पर पुनः व्याख्यायित करते हैं। रोहिणी, देवकी और वसुदेव से सम्बन्धित घटनाओं को वे यथार्थवादी आधार प्रदान करते हैं। यहाँ उद्देश्य पौराणिक आस्था को नष्ट करना नहीं, बल्कि उसे ऐतिहासिक सम्भावना के धरातल पर समझना है। इस प्रकार 'देवकी का बेटा' पौराणिक आख्यान का आधुनिक पुनर्पाठ प्रस्तुत करता है, जहाँ श्रद्धा और विवेक दोनों का संतुलित समन्वय दिखाई देता है।

मानवतावाद और जननायक कृष्ण- रांगेय राघव के कृष्ण का सबसे बड़ा गुण उनका मानवतावादी स्वरूप है। वे केवल देवता नहीं, बल्कि पीड़ित मानवता के संरक्षक हैं। सम्पूर्ण उपन्यास में कंस और कृष्ण का संघर्ष वस्तुतः दो व्यक्तियों का संघर्ष नहीं, बल्कि पशुता और मानवता का संघर्ष है। कंस की सत्ता हिंसा, भय और दमन पर आधारित है। उसने उग्रसेन को बन्दी बनाया, देवकी-वसुदेव को कारागार में डाला और निर्दोष शिशुओं की हत्या की। लेखक उसकी निरंकुशता का चित्रण करते हुए लिखता है- "कंस आज लहर-लहर में विध्वंस की प्रतिहिंसा बनकर व्याप्त हो गया

था।"[8] इसके विपरीत कृष्ण लोककल्याण के लिए संघर्ष करते हैं। उनका उद्देश्य सत्ता प्राप्त करना नहीं, बल्कि अन्याय का अन्त करना है। वे स्वयं स्वीकार करते हैं कि "मैं वन और ग्राम का वासी हूँ। इतना ही जानता हूँ कि मनुष्य के दुःख के लिए मैंने संघर्ष किया है।"[9] लेखक का यह विचार कृष्ण को भारतीय साहित्य का सर्वश्रेष्ठ जननायक सिद्ध करता है। वे युद्ध इसलिए नहीं करते कि राज्य प्राप्त हो; वे संघर्ष इसलिए करते हैं कि समाज में न्याय स्थापित हो। कंस-वध के पश्चात् स्वयं राजा न बनकर उग्रसेन को पुनः सिंहासन सौंप देना उनके लोकतांत्रिक चरित्र का प्रमाण है।

चरित्र-चित्रण की कलात्मकता- इस उपन्यास की सबसे बड़ी साहित्यिक शक्ति उसका चरित्र-चित्रण है। कृष्ण का व्यक्तित्व बहुआयामी है। वे बालक हैं, मित्र हैं, योद्धा हैं, चिन्तक हैं, राजनीतिज्ञ हैं और सबसे बढ़कर लोकनायक हैं। लेखक ने उनके व्यक्तित्व में चमत्कारों की अपेक्षा विवेक, साहस और नेतृत्व क्षमता को अधिक महत्व दिया है। बाल्यावस्था में ही उनकी असाधारण प्रतिभा का संकेत मिलता है- "उसकी आयु का छोटापन उसकी बुद्धि के बड़प्पन ने ढक लिया था।"[10] कृष्ण के भीतर सत्ता का लोभ नहीं है। वे प्रेम और लोकहित को सर्वोच्च मानते हैं। मथुरावासियों द्वारा धन देकर गोकुल से सम्बन्ध विच्छेद कराने का प्रयास उन्हें स्वीकार नहीं। वे स्पष्ट कहते हैं कि "धन की बात कहकर आपने मेरी माता यशोदा, पिता नन्दगोप और ब्रज के विशाल हृदय गोप-गोपियों का अपमान कर दिया है।"[11]

दूसरी ओर कंस का चरित्र सत्ता के अहंकार का प्रतीक है। वह क्रूर, संदेहग्रस्त, विलासी और निरंकुश शासक है। उसके भीतर भय इतना गहरा है कि प्रत्येक बालक उसे अपनी मृत्यु का दूत दिखाई देता है। यही भय अन्ततः उसके विनाश का कारण बनता है। महारानी अस्ति का चरित्र भी उल्लेखनीय है। वह राजनीतिक दृष्टि से अत्यन्त चतुर है और कंस की साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षा को निरन्तर उकसाती रहती है। उसके माध्यम से लेखक तत्कालीन सत्ता-राजनीति की कूटनीतिक प्रवृत्तियों का उद्घाटन करता है। देवकी, वसुदेव, यशोदा, नन्द, अक्रूर, राधा और उग्रसेन जैसे पात्र भी सीमित उपस्थिति के बावजूद अपने-अपने नैतिक पक्ष को सशक्त ढंग से अभिव्यक्त करते हैं। इस प्रकार उपन्यास का चरित्र-विधान अत्यन्त संतुलित और प्रभावशाली है।

इतिहास और कल्पना का मणिकांचन संयोग- जीवनीपरक उपन्यास की सफलता इतिहास और कल्पना के संतुलन पर निर्भर करती है। रांगेय राघव ने इस कसौटी पर असाधारण सफलता प्राप्त की है। उन्होंने इतिहास के मूल तथ्यों से विचलित हुए बिना कल्पना का ऐसा प्रयोग किया है जिससे कथा में रोचकता, संवेदनशीलता और कलात्मकता का समावेश हो गया है। कृष्ण, कंस, देवकी, वसुदेव, नन्द, यशोदा, बलराम और उग्रसेन जैसे पात्र इतिहास एवं पुराण से प्राप्त हैं, जबकि जयाश्व, भद्रवाह, रोचना, चित्रगंधा आदि पात्रों का उपयोग लेखक ने कथानक की गति और वैचारिक विस्तार के लिए किया है। इन पात्रों के माध्यम से तत्कालीन समाज का बहुआयामी स्वरूप उद्घाटित होता है। राधा-कृष्ण के संवाद, यशोदा का वात्सल्य, पूतना का प्रसंग, जयाश्व की राजनीतिक सक्रियता तथा कंस की मानसिक व्याकुलता-ये सभी प्रसंग उपन्यास की कलात्मकता को समृद्ध करते हैं। कहीं भी कल्पना इतिहास पर आरोपित नहीं लगती, बल्कि इतिहास की स्वाभाविक व्याख्या के रूप में सामने आती है। यही कारण है कि पाठक इतिहास और कल्पना की सीमारेखा को अलग-अलग अनुभव नहीं कर पाता।

इतिहास, आधुनिकता और मानवीय चेतना का समन्वय- 'देवकी का बेटा' का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसमें इतिहास केवल अतीत का वृत्तांत नहीं रह जाता, बल्कि वर्तमान का दर्पण बन जाता है। रांगेय राघव कृष्ण-युगीन समाज के माध्यम से आधुनिक भारतीय समाज की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक समस्याओं की ओर संकेत करते हैं। इसीलिए उपन्यास का प्रत्येक प्रसंग किसी न किसी समकालीन प्रश्न से जुड़ जाता है। कंस की निरंकुशता, प्रजा का शोषण, गणतांत्रिक व्यवस्था का विनाश, वर्ण-आधारित विषमता, स्त्री की स्थिति, धार्मिक रूढ़ियाँ आदि सभी

प्रसंग आधुनिक भारत के लिए भी उतने ही प्रासंगिक प्रतीत होते हैं।

लेखक का कृष्ण किसी संप्रदाय विशेष का आराध्य नहीं, बल्कि समस्त मानवता का प्रतिनिधि है। वह न केवल अत्याचार का प्रतिरोध करता है, बल्कि न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की स्थापना का स्वप्न भी देखता है। यही कारण है कि उपन्यास में कृष्ण का यह कथन अत्यन्त सार्थक बन पड़ता है- "एक बड़ा राष्ट्र हो, न वहाँ ब्राह्मण गर्व हो, न क्षत्रिय गर्व। शासन राजा का हो, परन्तु पुराने समय का-सा हो, जब समिति निर्णय करती थी, निरंकुशता नहीं हो।"[12] यह स्पष्ट करता है कि रांगेय राघव कृष्ण को लोकतांत्रिक मूल्यों का समर्थक तथा सामाजिक समता का प्रवक्ता बनाकर प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार उनका कृष्ण भारतीय लोकतांत्रिक चेतना का ऐतिहासिक प्रतीक बन जाता है।

मानवतावाद और लोकतांत्रिक चेतना- उपन्यास का मूल स्वर मानवतावादी है। कृष्ण का सम्पूर्ण संघर्ष किसी व्यक्तिगत प्रतिशोध के लिए नहीं, बल्कि जनसाधारण की मुक्ति के लिए है। देवकी-वसुदेव का कारावास, प्रजा पर अत्याचार, गण-व्यवस्था का विनाश तथा सामाजिक अन्याय जैसे सभी प्रसंग मानवता की पीड़ा को उद्घाटित करते हैं। कंस का आतंक इस सीमा तक पहुँच जाता है कि "उसने शूरसेन देश में प्रजा को कुचल दिया था।"[13] इसके विपरीत कृष्ण के व्यक्तित्व में करुणा, न्याय और समता का भाव है। इसी कारण मथुरा की जनता उन्हें अपना नेता स्वीकार करती है और कंस-वध के पश्चात् उन्हें राजा बनाना चाहती है। किन्तु कृष्ण व्यक्तिगत सत्ता से ऊपर उठकर लोकसत्ता की प्रतिष्ठा करते हैं। यही उपन्यास का लोकतांत्रिक आदर्श है।

भाषा, शैली और शिल्प- रांगेय राघव की भाषा संस्कृतनिष्ठ होते हुए भी अत्यन्त प्रवाहपूर्ण और प्रभावशाली है। संवादों में पात्रानुकूलता, कथन में ओज तथा वर्णन में चित्रात्मकता दिखाई देती है। महाभारतकालीन परिवेश की सृष्टि के लिए उन्होंने तत्सम शब्दावली, वैदिक सांस्कृतिक संकेतों तथा प्राचीन पदावली का सफल प्रयोग किया है। साथ ही आधुनिक विचारधारा की अभिव्यक्ति के कारण भाषा कहीं भी बोझिल नहीं होती। उपन्यास में वर्णन, संवाद, आत्मालाप और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का संतुलित प्रयोग इसकी कलात्मकता को समृद्ध बनाता है। यही कारण है कि यह कृति केवल ऐतिहासिक पुनर्कथन न रहकर एक सशक्त औपन्यासिक अनुभव बन जाती है।

निष्कर्ष- डॉ. रांगेय राघव का 'देवकी का बेटा' हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यास-साहित्य की प्रतिनिधि कृति है। इसमें लेखक ने कृष्ण को चमत्कारों के आवरण से मुक्त कर इतिहास, समाज और मानवता के धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। उपन्यास की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि वह अतीत और वर्तमान के बीच सशक्त संवाद स्थापित करता है। कृष्ण यहाँ केवल पौराणिक देवता नहीं, बल्कि अन्याय के विरुद्ध संघर्षरत जननेता, लोकतांत्रिक चेतना के प्रवक्ता और मानवीय मूल्यों के संरक्षक बनकर सामने आते हैं। रांगेय राघव ने इतिहास और कल्पना, परम्परा और आधुनिकता, श्रद्धा और विवेक, संस्कृति और सामाजिक परिवर्तन-इन सभी के मध्य अद्भुत संतुलन स्थापित किया है। उन्होंने पौराणिक आख्यान को आधुनिक जीवन-दृष्टि से जोड़ते हुए यह सिद्ध किया कि महान चरित्रों की सार्थकता उनके चमत्कारों में नहीं, बल्कि उनके मानवीय संघर्ष और लोकमंगल की भावना में निहित होती है। वस्तुतः 'देवकी का बेटा' कृष्ण-कथा का पुनर्लेखन नहीं, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक स्मृति का आधुनिक पुनर्पाठ है। यही कारण है कि यह उपन्यास हिन्दी के जीवनीपरक उपन्यास-साहित्य में मील का पत्थर सिद्ध होता है तथा आज भी इतिहास-बोध, मानवतावाद और लोकतांत्रिक मूल्यों की दृष्टि से समान रूप से प्रासंगिक बना हुआ है।

सन्दर्भ सूची

1. रांगेय राघव की सम्पूर्ण औपन्यासिक जीवनियाँ, देवकी का बेटा, पृष्ठ 3 (भूमिका)

2. वही, पृष्ठ 4, (भूमिका)

3. वही, पृष्ठ 130-131

4. वही, पृष्ठ 3, (भूमिका)

5. रांगेय राघव की सम्पूर्ण औपन्यासिक जीवनियाँ, देवकी का बेटा, पृष्ठ 87

6. वही, पृष्ठ 111

7. वही, पृष्ठ 89

8. वही, पृष्ठ 26

9. वही, पृष्ठ 126

10. वही, पृष्ठ 16

11. वही, पृष्ठ 127

12. वही, पृष्ठ 108

13. वही, पृष्ठ 63